International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 8.141
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 7 No. 2 January – February - 2026

२१ वीं सदी के हिन्दी कथा साहित्य में दलित विमर्श

डॉ. रोहिणी रामचंद्र साळवे

सहा. अध्यापक, दहिवडी कॉलेज, दहिवडी.

***Corresponding Author –** डॉ. रोहिणी रामचंद्र साळवे*

DOI - 10.5281/zenodo.18654452

सारांश:

भारतीय समाज में वर्ण और कर्म को अनन्य साधारण महत्त्व दिया गया है और इसके केंद्र में 'धर्म' को रखा गया है I धर्म व्यवस्था की मूल जड़ जातिव्यवस्था रही है I इस जातिगत व्यवस्था ने मनुष्य-मनुष्य में भेदाभेद का निर्माण किया I इस भेदाभेद से मानव समूह के एक वर्ग को हमेशा तिरस्कृत नज़रों से देखा गया और उन पर बहुत सारे अन्याय किए गये I जो मनुष्य के लिए अशोभनीय है I इस तिरस्कृत वर्ग को 'दलित' नाम से जाना गया है I

'दलितों' का सम्पूर्ण जीवन अनुसंधान का विषय रहा है I आज यह वर्ग मात्र अनुसंधान या चर्चासत्र का विषय ही नहीं रहा अपितु सामाजिक संगठन तथा डॉ. बाबासाहब आम्बेडकर द्वारा लिखित 'संविधान' के सहयोग से अपने हक़ तथा अधिकारों के लिए लड़कर, मनुष्य होने के नाते समाज में एक प्रतिष्ठित पद या मनुष्य के रूप में विराजमान हो रहा है I

विषयवस्तु:

१. 'दलित' शब्द की व्यापकता:

'दलित' शब्द भारतीय समाज में एक विशिष्ट मानसिकता से ग्रसित उच्च समझे जाने वाले लोगों द्वारा निम्न समझी गई अस्पृश्य जाति के लिए निर्माण किया गया है I "दलित' शब्द 'अछूत' और 'हरिजन' जैसे शब्दों का परिष्कृत और साहित्यिक संस्करण है I"[१] ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र इन चार अर्थात चातुर्वर्ण व्यवस्था ने 'दलित' शब्द को जन्म दिया है I "दलित' केवल हरिजन और नवबौद्ध ही नहीं, गाँव की सरहद के बाहर रहने वाली सभी अछूत जातियां, आदिवासी, भूमिहीन, खेत मजदूर, श्रमिक, जनता और यायावर जातियाँ सभी 'दलित' शब्द की परिभाषा में आती है I"[२]

२. दलितों का नेतृत्व:

भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकर जी ने सामाजिक, आर्थिक, राजनितिक आदि. विभिन्न विषयों पर गहराई से अध्ययन किया और समाज प्रबोधन का कार्य कर भारत का संविधान लिखा I जिसमें सभी वर्गों को समानता तथा मनुष्य के रूप में जीने का अधिकार दिया गया है I उनके नेतृत्व में दलितों का सामाजिक जीवन बदलता गया और उनमें स्वाभिमान की भावना जागृत हुई I डॉ. बाबासाहब आम्बेडकर ने इन्हें शिक्षित बनो, संघटित बनो और संघर्ष करो का मूलमंत्र दिया I महाड का पानी का सत्याग्रह, कालाराम मंदिर में प्रवेश, सामाजिक असमानता ध्यान में रखते हुए सामाजिक तथा शिक्षा में आरक्षण आदि. अनेक क्रांतिकारक निर्णय उन्होंने लिए I उनका यह संग्राम जातिवाद के खिलाफ़ का संग्राम था I २१ वीं सदी में यह संग्राम इतना व्यापक बन गया कि, कोई जातिगत शब्दों का प्रयोग कर किसी को हीन भावना का बोध कराता है, तो उसके लिए ॲट्रॉसिटी जैसा अधिनियम बनाया गया है I जो सामाजिक समता लाने में आवश्यक है I डॉ. रघुवीर सिंह कहते है, डॉ. बाबासाहब ने गहन अध्ययन करके "अस्पृश्यों

को उसका खोया धर्म, उसकी खोई अस्मिता वापस दी है, जिसके साथ भारत की सोने की चिड़िया का प्रतिकार करने के लिए संगठन, सहयोग पहली आवश्यकता है I अछूतों की संगठन शक्ति ही उन्हें सभी तरह के अत्याचारों से मुक्ति दिला सकती है I"[३]

३. विद्रोह का साहित्य:

दलित साहित्य में आत्मसम्मान की ख़ोज में सामाजिक अन्याय के विरुद्ध संघर्ष की ख़ोज को दिखाया है I यह साहित्य करुणा का नहीं बल्कि विद्रोह का साहित्य है I सदियों से हो रहें अन्याय-अत्याचारों से उभरकर जो लोग शिक्षित बने है, वह संघटीत होकर इन चातुर्वर्ण व्यवस्था तथा ग़लत परंपराओं का विरोध करते हैं I यह विरोध तथा विद्रोह अमानवीय व्यवहार के विरुद्ध है, जो समानता की बात करता है I इस विरोध में सदियों से सहे अन्याय के खिलाफ़ विद्रोह अभिव्यक्त होता दिखाई देता है I मोहनदास नैमिशराय लिखते हैं-

" कल मेरे हाथ में झाड़ू था,
आज कलम
कल झाड़ू से मैं तुम्हारी गन्दगी हटाता था,
आज कलम से I"[४]

यहाँ चातुर्वर्ण व्यवस्था के खिलाफ़ आक्रोश तथा विद्रोह का स्वर दिखाई देता है, जो स्वाभाविक है I

४. हिन्दी का दलित साहित्य:

मनुष्य ही मनुष्य को किस प्रकार निम्न जाति का मानकर उसके साथ अन्याय-अत्याचार करके, उस मनुष्य को हीन भावना का बोध कराता है और इससे उत्पन्न दुःख-दर्द का चित्रण 'दलित साहित्य' में किया गया है I डॉ. बाबासाहब आम्बेडकर जी के निधन के बाद दलित समाज ने उनकी दी गई शिक्षा के अनुसार लिखना, बोलना तथा अन्याय के विरुद्ध लड़ना शुरू किया और इसी से 'दलित विमर्श' का जन्म हुआ I यह विमर्श अनेक उपन्यासों, कहानियों, नाटकों, आत्मकथाओं आदि. साहित्यिक विधाओं का विषय बना है I इस वर्ग के लिए भले ही कानून तथा अधिनियम बनाएं गये, सामाजिक समानता लाने का प्रयास किया गया हो परन्तु आज भी बड़ी मात्रा में यह समाज इस अवस्था में है कि, उनका शिक्षा से कोई समन्ध नहीं आया I फलस्वरूप विद्रोह, अस्मिता, स्वाभिमान जैसे शब्दों से उनकी पहचान आज २१ वीं सदी में भी नहीं हो पाई है I यह व्यवस्था चलाने का काम आज भी बहुत बड़ी मात्रा में उच्च वर्ग के हाथ में है I बदलाव तो हो रहा है परन्तु आज भी बहुत लोगों की मानसिकता पुरानी ही दिखाई देती हैं और इन दलित लोगों के साथ न्याय नहीं हो पाता है I दलितों पर हुए अनेक अन्याय-अत्याचार साहित्य के विषय बने हैं I

नमिता सिंह 'अपनी सलीबें' में अनाथ इशु और सवर्ण समाज की नीलिमा के बीच के प्रेम को चित्रित करती है I दोनों की शादी होने के बाद नीलिमा को पता चलता है कि, इशु हरिजन है, तो वह उसे निम्न जाति का मानकर छोड़ देती है और उससे घृणा करती है I उपन्यास में "भुजपुरा गाँव की एक चमार लड़की मीना के साथ चार लोग भेड़िये की तरह बलात्कार करते हैं, फिर उसकी हत्या कर देते हैं I उसके पिता नामजद रिपोर्ट करने को तैयार नहीं थे I समाज में अछूत माने जाने वाले लोग हिम्मत कैसे जुटाते, यहाँ तो अब भी पुराना राज चलता है, इंसाफ की तराजू अभी वैसी ही पुरानी जंग खाई हुई है I"[५] आज भी यह दलित समाज इतना पिछड़ा है कि, अपने हक़ के लिए पुलिस थाने जाकर रिपोर्ट लिखवाना या न्याय मांगना इतना मुश्किल मानते है कि, वहां तक जाने की हिम्मत नहीं करते I 'संविधान' द्वारा दलितों को एक मनुष्य होने के नाते मनुष्यता के सारे अवसर प्रदान किए गये है परन्तु बहुत बड़ी मात्रा में वह अशिक्षा तथा अज्ञान के कारण इससे वंचित दिखाई देते है I इनका जीवन आज भी अँधेरे से भरा है I गाँव के बाहर इन्हें

उपेक्षित जीवन जीना पड़ता है I अपमान, बेकारी, भूख, गन्दी बस्तियां, अशिक्षा यही इनका जीवन बना है I कवि दामोदर मोरे इस उपेक्षित जीवन का चित्रण करते हुए लिखते है-

" उन्हें बनाया गुलाम
भगा दिया गाँव के बाहर
अछूत के नाम से किया विभूषित
वही अस्पृश भारत I
झाड़ू मारते, मैला ढोते थक गये हाथ
मैले कपड़े, मैला बदन, मैले हाथ
कोई न बैठने देता अपने साथ
गन्दी गाली देकर करते है बात"[६]

यह जातिवादी प्रवृत्ति आज २१ वीं सदी में भी स्पष्ट दिखाई देती है I दलितों के एक वर्ग में शिक्षा के कारण अस्मिता जग रही है तो दूसरी और इस समाज का बहुत बड़ा हिस्सा अज्ञान, अशिक्षा तथा अंधश्रद्धा की खाई में डूबा हुआ है I इस समाज की पीड़ा को दलित विमर्श के माध्यम से उजागर करने का प्रयास हो रहा है I मोहनदास नैमिशराय का २००४ में प्रकाशित 'मुक्तिपर्व' दलित जीवन की संघर्षगाथा हैं I इससे शिक्षित दलित, चमारों का जीवन तथा अध्यापकों की मानसिकता को उजागर किया हैं I

रूपनारायण सोनकर की आत्मकथा 'नागफनी' में दलित जीवन की त्रासदी, उनके ऊपर होने वाले अन्याय-अत्याचार तथा उससे निर्माण हुआ विद्रोह चित्रित किया है I

रजतरानी मीनू की कहानी 'सुनीता' में स्त्री शिक्षा का महत्व बताया गया है I सुनीता अपने माता-पिता की बात न मानते हुए शिक्षित होती है और उच्च पद हासिल करते हुए कहती है, "माँ चमार और भंगी को इसलिए पुश्तों से दूर रखा गया ताकि ये लोग अपना सफ़ाई और चमड़े का पुश्तैनी धंदा न छोड़े I अगर पढ़ेगें तो ये बोलने लगेंगे I ये अपने हक़ की बात करने लगेंगे और पढ़ने के लायक बन जायेंगे तब ये कॉलेज जायेंगे, अफ़सर बन जायेंगे, साहित्यकार और पत्रकार भी बन जायेंगे I"[७]

यह कहानी गलत मानसिकता के सवर्णों की साजिशों को उजागर करती है I सुनीता के माध्यम से स्त्रियों के लिए भी शिक्षा का महत्त्व तथा सामाजिक क्रांति को उजागर किया है I सुनीता में सामाजिक असमानता के विरुध्द विद्रोह और अपनी अस्मिता तथा स्वाभिमान के प्रति सजगता दिखाई देती हैं I

निष्कर्ष:

'दलित विमर्श' में एक ऐसे वर्ग का समावेश हुआ है, जो सदियों से पीडित, अन्यायों से ग्रस्त, हीनता का शिकार होते आये हैं I इस वेदना को उजागर करने का कार्य साहित्य के माध्यम से अनेक साहित्यकारों ने विविध विधाओं के माध्यम से किया हैं I यह साहित्य 'दलित विमर्श' के अन्तर्गत आता है I इसे 'वेदना का साहित्य' भी कहा गया है I इसमें अपने स्वाभिमान और अस्मिता की खोज दिखाई देती है I समाज में फैली कुरीतियों, अन्याय-अत्याचार, जातिगत भेदाभेद आदि. को उजागर कर मनुष्य को 'मनुष्य' के रूप में स्वीकारने का आग्रह दलित विमर्श का मूल है I यह लड़ाई समानता, सम्मान तथा स्वाभिमान की है I

सन्दर्भ:

१. दलित चेतना और समकालीन हिन्दी उपन्यास, डॉ. मुन्ना तिवारी, पृ.सं. – १४
२. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, शरणकुमार लिम्बाले, पृ. सं.- ४२
३. डॉ. आम्बेडकर और दलित चेतना, डॉ. रघुवीर सिंह, पृ. सं.- ७३

४. आग़ और आन्दोलन, मोहनदास नैमिशराय, पृ.सं.- ७२

५. अपनी सलीबें- नमिता सिंह, पृ.सं.- ६६ से ६९

६. नीले शब्दों की छाया में, प्रा. दामोदर मोरे, पृ.सं.- ५४

७. हिन्दी के दलित कथाकारों की पहली कहानी, संपा. सूरजपाल चौहान, पृ.सं.- १२७